4769

भारत के तीन रत्न

लेखक
विद्वान आण्डूर

Price 75 NP.

1158

വിദ്യാർത്ഥിമിത്രം പ്രസിദ്ധീകരണം

॥ भारत के तीन रत्न ॥

4769

लेखक
विद्वान आण्डूर

Price 75 nP.

विद्यार्थी मित्रम प्रेस और बुक डिपो ,
बेक्कर रोड, कोट्टयम, केरल प्रांत ।

BHARAT KE THEEN RATNA

By VIDWAN ANDOOR

First Edition
February 1964

Price Re. 0-75

Copy right reserved by the Publishers.

Publishers:
THE VIDYARTHI MITHRAM PRESS & BOOK DEPOT,
KOTTAYAM, KERALA STATE.

Printed at
THE VIDYARTHI MITHRAM PRESS,
KOTTAYAM.

*O. N. 744 *1000*

H769

विषय सूची

१	वीर तानाजी	१
२	वीर रघुनाथ	१४
३	'तिलक' बचपन	२६

ਵਿਸ਼ਾ ਸੂਚੀ

੧	ਜਿਹਨਾਂ ਸ਼ਬਦਾਂ	੧
੪੭	ਸ਼ਾਬਦਿਕ ਸ਼ਬਦ	੨
੭੮	ਸਾਬਕ 'ਕਰਨੀ'	੩

H 7169

॥ भारत के तीन रत्न ॥

वीर तानाजी

शिवनेरी किला में शिवाजी का जन्म हुआ था। माता जीजा बाई अपने पुत्र का पालन पोषण करती थी। जीजा बाई एक बडी वीरांगना थी। रामायण और महाभारत की रसमयी कथायें सुनाकर बचपन से ही शिवाजी के दिल में वीरता और आत्मगौरव के भाव को संचारित कर देती थी। वंश के प्राचीनगौरव की कहानियाँ सुना कर शिवाजी को वंशोद्धार के लिये उत्साहित किया। माता के दूध पीते समय वीर रस का पान करनेवाले शिवाजी ने भी अपने वंश के उद्धार करने का निश्चय किया था। दादा कोंडदेव ने शिवाजी को शिक्षा-दीक्षा दी थी। तीर, भाला और तलवार चलाना और घोडे पर सवारी करना आदि भी शिवाजी ने सीख लिया था।

उस समय दिल्ली का बादशाह औरंगज़ेब था। वह अपना राज्य बढाते बढाते दक्खिन की ओर भी निकला। हिन्दुओं के आपसी फूट के कारण उन की शक्ति तितर बितर हो गयी थी। यह देख कर शिवाजी को बडा दुख होता था। इसलिये दक्खिन में एक साम्राज्य की स्थापना करने की इच्छा उन में हुई। शिवाजी ने पहले महाराष्ट्र प्रदेश को अपने अधीन में कर दिया और स्वयं वहाँ शासन करने लगे। इस के बाद पहाडों पर रहनेवाली मावले जाती की एक

सेना इकट्ठा की। मावले लोग बड़े वीर और योद्धा थे। शिवाजी ने एक एक कर के कई किले अपने अधीन किये। इस तरह महाराष्ट्र में शिवाजी की ताकत जम गई। शिवाजी अपनी प्रजा और अपने अधीन के कर्मचारियों को बड़ा प्यार करते थे। इसलिये वे लोग भी शिवाजी की आज्ञा पर मर मिटने के लिये तैयार रहते थे। शिवाजी ने अपने आदमियों को यह उपदेश देते थे कि आज़ादी और धनों की अपेक्षा बहुत बड़ी है। कई दिन गुलाम होकर रहने की अपेक्षा थोड़े दिन आज़ादी से रहना कहीं अच्छा है। शिवाजी के कर्मचारी और प्रजा इस बात को मान लेती थी। इस कारण से वे हमेशा आज़ादी के लिये मर मिटने को तैयार रहते थे। वे शिवाजी पर प्रेम और भक्ति रखते थे। शिवाजी वेष बदल कर राज्य की हालत समझ लेते थे। उस के बाद उस के अनुसार काम करते थे।

दक्खिन में शिवाजी की ताकत बढ़ते देख कर औरंगज़ेब चिन्तित हो गया। शिवाजी के पास औरंगज़ेब के समान बड़ी सेना नहीं थी। इसलिये शिवाजी छिप छिप कर कहीं कहीं आक्रमण करते थे। तानाजीमालसुरे शिवाजी का बाल्यसखा और सेनापति था। दोनों में अमिट प्रेम और विश्वास था। तानाजी के अधीन मावलों एक सेना थी। लड़ने में मावलों की होशियारी कुछ और ही थी।

पूना के पास कोंडाणा का किला महाराष्ट्र शक्ति कायम रखने के लिये बड़ी ज़रूरी थी। समर्थ रामदास शिवाजी के आध्यात्मिक गुरु थे। साथ साथ रामदास शासन के कार्य में भी कभी कभी शिवाजी को उपदेश देते थे। एक दिन गुरु ने शिवाजी को बुला कर कहा, शिवा, कोंडाणा

किला अपने अधीन रखना महाराष्ट्र की रक्षा के लिये अनिवार्य है। शिवाजी ने गुरु की बात मान ली। लेकिन शिवाजी चिन्ता में पड गये कि किला कैसे जीत सकते हैं।

कोंडाणा किले का रक्षक उदयभानु नामक एक राजपुत है। कमलकुमारी नामक एक विधवा को उस ने वहाँ लाकर रखा था। कमलकुमारी का पति एक वीर सेनानी था। वह एक लडाई में मारा गया था। इसलिये कमलासती धर्म के पालन करने के लिये निकली। उदयभानु औरंगज़ेब का एक सरदार था। उस के अधीन दो हज़ार सिपाही थे। वे दिल्ली से दक्खिन की ओर आ रहे थे। रास्ते में कमला को देखा। वह एक सुन्दरी और जवान थी। उदयभानु उस को देखते ही उस पर मोहित हो गया। कमला के साथ केवल आठ ही आदमी थे। उन को मार कर उदयभानु ने कमला को पकडकर अपने साथ ले गया। वह बडा नीच और दुष्ट भी था। इस के अलावा यह किला बहुत बडा और बहुत ऊँचाई पर था। उदयभानु की सहायता के लिये और भी सेना दिल्ली से आ रही थी। इस किले की रक्षा करना औरंगज़ेब को भी बडी ज़रूरत थी। इसलिये कोंडाणा किले पर आक्रमण करना आसान काम नहीं था।

शिवाजी और माता में इस के बारे में बातचीत हुई। तब जीजाबाई ने कहा, गुरुजी का कहना बिलकुल ठीक है। जब तक यह किला मुगलों के अधीन में रहेगा तब तक महाराष्ट्र की रक्षा नहीं हैं। इसलिये उसे अधीन करना बडी ज़रूरी है।

शिवा:—मैं भी वहाँ सोच रहा हूँ। लेकिन इस समय कैसे उस पर आक्रमण कर सकते हैं। एक तो, दो हज़ार

सैनिक किले की रखवाली के लिये किले में हैं। इस के बिना और भी मुगल सेना आ रही है।

जीजा:—मुगलों की सेना की संख्या अधिक होने से तुम डरते हो क्या?

शिवा:—माँ, मैं डरता तो नहीं हूँ। पर मैं यही सोच रहा हूँ कि किस के नेतृत्व में सेना भेजूँ? तानाजी अपने लडके की शादी के लिये गया है। वह शादी की तैयारियाँ लगा होगा। ऐसी हालत में उस को कैसे बुलाऊँ?

जीजाबाई ने अपने पुत्र से फिर कुछ नहीं कहा। वे वहाँ से उठ कर चली गयीं।जीजाबाई ने तानाजी के नाम एक पत्र लिखा। कोंडणा किला मुगलों के अधीन में है। यह हमारेलिये बडी आपत्ति है। इसलिये लडके की शादी होते ही तुम अपने सैनिकों लेकर जलदी यहाँ पहुँचो। यह पत्र एक ईमानदार दूत के जरिये तानाजी के पास भेज दिया। जब दूत तानाजी के पास पहुँच गया तब वहाँ शादी का उत्सव मना रहा था। तानाजी ने पत्र पढा तो मालूम हुआ कि यह माताजी की आज्ञा है।

तानाजी का एक मात्र लडका था रायबा। तानाजी उस गाँव का नेता था। शिवाजी महाराजा का प्रधान सेनापति और महाराष्ट्र के सब से बडा नेता है तानाजी। प्रधान सेनापति होने के कारण वे अक्सर अपने गाँव में नहीं आते हैं। अब गाँववालों की बडी इच्छा करने पर पुत्र के व्याह के लिये वे आये हैं। उन के पुत्र का विवाहोत्सव न मनाये जाय तो वे फिर किस का उत्सव मनायेगा। इसलिये गाँववालों ने यह विवाहोत्सव बडी ठाट बाट के साथ मनाने का निश्चय किया था। दावतें, गाने, नाच आदि एक एक जिम्मेदारी गाँव के भिन्न भिन्न मुखियाओं

ने अपने अपने ऊपर ले ली है। किसी बात में कोई कमी नहीं है। सारे गाँववाले मिल कर उत्सव मना रहे हैं। इस के पहले ऐसा एक उत्सव उस गाँव ने कभी नहीं देखा था। सब आनन्द में मग्न हैं। पत्र पढने के बाद तानाजी ने अपना भाई सूर्याजी को बुला कर कहा—मुझे अभी महाराजा के पास जाने की बडी ज़रूरत है। विवाहोत्सव तीन दिन भी मनाने के बाद सारी सेना जमा कर के एक हफ्ते के पीछे तुम वहाँ पहुँचना। इतना भाई से कहने के बाद तानाजी अपने हथियार और चुने हुए पाँच सौ वीरों के साथ निकले। वे तीन दिन चल कर शिवाजी के पास पहुँचे। तानाजी के आने की खबर सुन कर शिवाजी के आनन्द की सीमा न रही। तानाजी ने शिवाजी के पास पहुँच कर बन्दना की।

शिवः—तुम अपने पुत्र के विवाहोत्सव छोड कर कैसे आये ?

तानाः—आप ने मुझे बुलाया नहीं ?

शिवाः—मैं ने नहीं बुलाया था, पर माताजी ने बुलाया होगा।

इतने में जीजाबाई भी वहाँ आ पहुँची। उन्होंने तानाजी को देख कर कहा, मैं ने ही तुम को बुलाया था। पीछे बातें करेंगे। अब जाकर स्नान तथा भोजन करो।

माताजी की आज्ञा मान कर तानाजी स्नान आदि काम के लिये बाहर निकले। तानाजी और उन के साथी भोजन करने के बाद सब आराम करने लगे। शिवाजी और तानाजी में यह बातचीत चली।

शिवाः—ताना, इस समय तुम को बुलाने से मुझे बड़ा दुःख है। तुम अपने बेटे के विवाहोत्सव में लगे हुए

थे। गाँववाले तुम्हारे दर्शन करने और तुम्हारे साथ कुछ दिन बिताने के लिये बडी आशा बहुत दिनों से करते थे। इस के कारण ही एक महीना तुम वहाँ रह कर विवाहोत्सव मनाने को मैं ने कहा था।

तानाः— गाँववाले बडे आनन्द में हैं और वे उत्सव मना भी रहे हैं। मेरेलिये पहले राष्ट्र का काम पीछे विवाहोत्सव। इसलिये जो आशा है, फरमाइये।

शिवाः— कोंडणा के किले में अभी दो हज़ार सैनिक हैं। पीछे सेना आ रही है। औरंगज़ेब इस किले को मज़बूत बनाकर इस में ज्यादा सेना रखने का मतलब हमारा सर्वनाश करना है। मुझे यह किला छोडने का विचार नहीं था। संधी के अनुसार पुरन्दर का किला और यह किला मैं ने छोड दिया। बडे दर्द के साथ मैं ने ऐसा किया। तब मेरा विचार था कि पीछे इन दोनों किलों को अपने ही अधीन में लाऊँ। लेकिन इतनी जलदी यह काम करने का विचार नहीं था। हम साँप का विश्वास कर सकते हैं, पर औरंगज़ेब का विश्वास कभी नहीं कर सकते। उस का हर एक काम धोखे से भरा रहता है। इस के बिना एक नीच और दुष्ट उदयभानु है किले का रक्षक।

तानाः— उस के बारे में कुछ न कहना ही अच्छा है। उदयभानु एक राज पुत है। उस के जन्म के बारे में कई कहानियाँ हैं। वे कुछभी हो, हमें उस के बारे में खोजने की अवश्यकता नहीं है। उस नीच ने जो बडा अधर्म किया है उसे मैं बताऊँगा। उदयभानु पहले मेवाड की सेना में एक सिपाही था। उस ने कमल कुमारी नामक एक राजपुत कन्या के साथ विवाह करना चाहा। लेकिन राजपुतों ने उसे इन कार किया और उस की बडी निन्दा

भी की। वह बिगड कर चला गया और औरंगज़ेब की सेना में भर्ती हुआ। औरंगजेब ऐसे कुलद्रोहियों को पाकर बहुत खुश होता है और उन को ऊँचे ओहदे भी दिये जाते हैं। उदयभानु जिस कन्या के साथ विवाह करना चाहता था उस कन्या का विवाह एक राजपुत वीर के साथ हुआ। विवाह के एक ही साल बाद वह वीर मारा गया और कमलकुमारी विधवा हो चुकी। वह सतीधर्म के पालन करने केलिये अपने आदमियों के साथ निकली। इस समय उदयभानु दक्खिन की ओर आ रहा था। रास्ते में उस ने कमलकुमारी से मिला। उदयभानु ने उस के साथ के आदमियों का वध कर के कमलकुमारी को पकड लाया। उस की एक सखी भी कमला के साथ है। बादशाह ने जब यह खबर सुनी तब उसने कहा कि तीन महीने के बाद उस के साथ शादी करो। लेकिन उस के पहले कमलकुमारी से बातें तक मत करो। ऐसी आज्ञा देकर उस को भेजा है। इसलिये उदयभानु ने कमला को यहाँ ला कर रखा है। उस साध्वी की मर्यादा की रक्षा करने का विचार मुझ में भी है।

शिवा:- तब और कुछ सोचने की अवश्यकता नहीं। सेना लेकर मैं निकलूँगा। तुम गाँव में जाकर पुत्र के विवाहोत्सव को पूरा करो और उस के पीछे सेना इकट्ठा कर के आओ।

ताना :- जब तक तानाजी जिन्दा रहूँगा तब तक आप को लडाई के लिये जाने न दूँगा। आज राष्ट्र शिवाजी महाराजा के बल पर ठहरा है। आप को कुछ हानी पहूँचने के बाद हम लोगों के जिन्दा रहने पर भी कोई फायदा नही है। इस लडाई की सारी जिम्मेदारी आप मुझ पर छोड दीजिये। आप महल में रह कर युद्ध की खबर लेते

रहें। मैं ने सूर्याजी से कहा है कि वह सेना लेकर पीछे आवे।

शिवा :- ताना, तुम्हारे और मेरे प्राण में कोई अंतर नहीं है। फिर भी, तुम्हारी इच्छा पर मैं सब छोड देता हूँ।

ताना :- तो आप इस लडाई के अंत होते तक महल से बाहर ननिकलने की कृपा करें।

शिवा :- जैसी तुम्हारी इच्छा। किले को हमारे अधीन कर लेने के बाद कहीं आग लगा कर हमें समझाओ कि किला हमारे अधीन में है। यहाँ से देखने पर आग देख सकते हैं।

उपयुक्त बातचीत के बाद ताना जी अपनी छोटी सीसेना ले कर निकले। वे तीन दिन चल कर किले के पास पहूँचे। सेना को कुछ दूर एक जगह ठहरने की आज्ञा देकर आप वेष बदल कर चले गये। उस किले की तलहटी में मछुओं की एक जाती रहती थी। वे भी लडने में बडे वीर थे। किले के रहस्यों को समझने के लिये मछुओं के मुखिया को कुछ धन देकर उस को अपने वश में किया। किले के बाहर रखवाली करने का काम उदयभानु ने इन को सौंपदिया था। तानाजी ने मुखिया की सहायता से गाँव वालों को इस बहाने में जमा किया कि एक गवैया आया है, वह अच्छे अच्छे गाने सुनायेंगे और साथ ही कृष्ण भक्ति की कहानी भी। रात में दस बजे गाने शुरू होने का निश्चय किया गया था।

इस के बाद तानाजी और मुखिया में बडी देर तक बातें होती रही। तानाजी उस मुखिया के मेहमान बन गये। तानाजी ने हिन्दुओं की आपसी फूट, मुगलों की ताकत,

औरंगज़ेब का मज़हबी पागलपन और शिवाजी का लक्ष्य आदि अनेकों बातें कहीं। वह मुखिया शिवाजी का भक्त बन गया। रात में दस बजे गाना शुरू हुआ। तानाजीने पहले भक्ति रस में भरे दो गाने गाये। उस के बाद वीर रस में तने हुए कुछ गीत गये। उन्हें सुनकर सुनने वालों का मन वीर रस से भरगया। मौका पाकर तानाजी ने अपने दिल की बात प्रकट की। उन्हों ने कहा कि शिवाजी हिन्दुधर्म के उद्धारक हैं और दक्खिन में एक हिन्दु शक्ति स्थापित करने केलिये वे दिनरात कोशिश कर रहे हैं। मैं उन का एक छोटा दास हूँ। किले में औरंगज़ेब अधिक सेना रखने का मतलब यह है कि हिन्दुओं का सर्वनाश कर के सारे हिन्दुस्थान मुसलमान धर्म फैल जाय। तानाजी की बातें सुन लेने पर वहाँ जितने लोग मौजूद हो गये थे, वे सब तानाजी की आज्ञा के अनुसार मरमिटने को तैयार हो गये। तानाजी अपने काम में विजयी हुए।

इस घटना के बाद तानाजी ने किले के अंदर के सारे रहस्य समझ लिये। उन्हों ने यह भी समझ लिया कि हिन्दु और मुसलमान सैनिकों में एकता नहीं है। उदयभानु सती का अपमान कर के कमलकुमारी को पकड कर किले में रखने से सारेराजपुत सैनिक उस के विरुद्ध हैं। वे उस से लडने केलिये मौके की प्रतीक्षा कर रहे हैं। ये सब बातें समझ लेने के बाद तानाजी गाँव के कुछ मुखियाओं के साथ किले के नीचे परिक्रमा करने लगे। उन का ध्येय यह था कि किले के किस ओर से ऊपर पहुँच सकते हैं। घूम घूम कर वे एक स्थान पर पहुँचे। उन्हों ने उसी मार्ग से किले के अंदर घुसने का निश्चय किया। उस के बाद एक बार भी वहाँ घूम फिरने के बाद लौटे। गाँववालों में और भी कुछ धन बंट दिया गया। वे कुल पाँच सौ वीर

थे। उन को तैयार कर के खडा किया। उस के बाद तानाजी अपने आदमियों के पास पहुँच कर सारी कथायें उन को सुनायी। तानाजी की बातें सुन कर वे सब बहुत प्रसन्न हुए। दूसरे दिन आधी रात के समय किले पर आक्रमण करने का निश्चय किया गया।

आधी रात का समय हो गया। तानाजी अपने चुने हुए पचास वीरों के साथ किले की तलहटी में आये। उन्होंने संदूक से अपना घोरपट उठाया और ऊपर फेंक दिया। लेकिन वह कहीं पकडे बिना नीचे आ गया। तानाजी को बडा आश्चर्य और गुस्सा आया। इस के पहले इस घोरपट की सहायता से कई किले पर विजय प्राप्त की है। लेकिन अब की बार यह लौट आया है। तानाजी ने दूसरी बार यह धमकी देते हुए उसे ऊपर फेंक दिया कि तुम लौट आओगे तो मैं तेरा टुकटा कर के कुत्तों को खिला-ऊँगा। अब की बार वह शायद डरसे होगा कि अपना पंजा गाड कर एक जगह बैठ गया। उस के कमर में जोरस्सी बाँधी थी तानाजी उसे पकड कर और दाँतों से तलवार थामते हुए ऊपर पहुँच गये। उन के पीछे एक एक कर के पचासों वीर किले में पहुँच गये।

किले में दो हज़ार सैनिक निश्चिन्त होकर नींद में लीन थे। एकाएक मराठों ने किले में आक्रमण किया। पहले फाटक पर जितने पहरेदार थे उन को बात ही बात में मार डाला। उस के बाद वे आगे बढे। दूसरे फाटक के पहरेदार भी मारे गये। किले में शोर गुल मच गया। किसी ने चिल्ला कर कहा "मराठे आक्रमण कर रहे हैं"। उदयभानु को खबर देने के लिये एक सिपाही ने उस के मकान

में जाकर आवाज़ दी। उदयभानु उस समय शराब के नशे में मस्त था। उसने इतना ही कहा कि शत्रुओं को मार डालो। कल्याण नामक एक फाटक था। उसे खोले बिना बाहर से सेना अंदर नहीं आ सकती। उस फाटक को खोलने के लिये और पाँच फाटक खोलने की आवश्याकता थी। इसलिये तानाजी और उन के साथी एक एक फाटक के पहरेदारों से मुकाबला कर रहे थे। तीन फाटक तोड दिये गये। चौथे फाटक पर लडाई हो रही थी। मुगल सिपाही भी लडने के लिये आये। लेकिन अंधेरे में वे यह नहीं जानते थे कि दुश्मन कौन है और मित्र कौन है? वे यह भी नहीं जानते थे कि दुश्मनों की संख्या कितने हैं? वे आपस में लड रहे थे। तानाजी के दो सैनिक उन को आपस में लडाने का उपाय कर रहे थे। जब यहाँ आपस में लडाई हो रही थी तब तानाजी ने अपने पराक्रम से कल्याणदुर्ग नामक फाटक भी खोल दिया। उस के खुलते ही मराठे सिपाही "हर हर महादेव" की जयध्वनी करते हुए किले में घुस गये। फिर क्या था! लाशें गिरने लगी, मराठे सिपाहियों के सामने मुगल सिपाही ठहर नहीं सके। वे चारों ओर भागने लगे। हर एक फाटक पर मराठे सिपाही पहरा दे रहे थे। जो जिस फाटक पर पहुँचता उन को वहाँ के पहरेदार मार डालते थे। किले के अन्दर सिर लुढकने लगे, खून की नदियाँ बहने लगी। सबेरा होते ही किले के अन्दर के तमाम सिपाही मारे गये।

उदयभानु जाग उठा। तब किले में दुश्मनों के सिवा और कोई नहीं था। औरंगज़ेब के गुस्से के बारे में वह जानता था। उस को मालूम था कि बचाव कोई मार्ग नहीं है। इसलिये उस ने यह निश्चय किया कि उस दुष्ट के हाथों मरने की अपेक्षा लडाई में प्राण देना ही उचित है।

इस विचार से वह पोशाकें पहन कर और हथियारों से लैस होकर लडने आया। उदयभानु बडा वीर और ताकतवर आदमी था। वह आकर तानाजी के साथ लडने लगा। तानाजी अच्छा योद्धा था। मगर किले में घुसते समय से बिना आराम के वे लड रहे थे। अनेकों मुगलों को उन्हों ने मार भी डाला था। इसलिये वे बहुत थक गये थे। फिर भी शत्रु को देख कर पीछे हटना वे नहीं जानते थे। इसलिये उदयभानु से लडने लगे। दोनों वीर एक दूसरे को हराने में बडा यत्न कर रहा था। लेकिन दोनों पराक्रमी और वीर होने से यह काम आसान नहीं था। तीन घंटे तक वे दोनों लगातार युद्ध करते रहे। उन के युद्ध की निपुणता और लडाई काढंग देख कर सब लोग अचरज में डूब गये। इतने में उदयभानु की तलवार का एक वार तानाजी के गले में और तानाजी की तलवार का वार उदयभानु के गले में एक ही समय पडा। दोनों एक साथ धराशायी हो गये। तानाजी को गिरते देख कर मराठे घबडा गये। इतने में सूर्याजी एक बडी सेना ले कर किले में घुस गया। भागने से मराठों को रोक दिया। शिवाजी महाराजा के कहे अनुसार कुछ सूखी घास को आग लगा कर विजयी की खबर उन को दी। आग देख कर महाराज शिवाजी बहुत प्रसन्न हुए। वे मन ही मन शिवाजी की तारीफ करते हुए घोडे पर सवार हुए। वे किले के पास पहुँच गये। लेकिन अंदर से कोई शोरगुल न सुनने के कारण वे बडे चिन्तित हुए। उन्हों ने सोचा कि खुशी मनाने के समय हमारे आदमियों ने क्यों मौन धारण किया?। उन का दिल धडकने लगा। उन्हों ने बडी तेज़ी से घोडे को दौडाया। उन को देखते ही सब मराठे चिल्ला कर रोने लगे। सूर्याजी ने महाराजा से कुछ कहे बिना उन को ले जा कर तानाजी

की लाश दिखायी। वे बच्चों की तरह वहाँ बैठ कर रोने लगे। थोडी देर बाद वे अपने को संभालकर बोले "गढ आया, पर सिंह गये"।

शिवाजी के जीवन में उन को कई कठिनाइयों तथा आपत्तियों का सामना करना पडा है। उन्हों ने बडे धीरज के साथ उन का सामना भी किया है। लेकिन इस के पहले कभी इतनी चोट उन के दिल को नहीं लगी है। उन के उस दुख में दिलासा देने वाला कोई भी नहीं था। क्यों कि तानाजी के मरने से सब लोग उन से बढ कर दुखी थे। इस कारण से उन को ही दूसरों को दिलासा देना पडा।

शिवाजी ने एक रेशम के कपडे से तानाजी की लाश को ढक दिया। उस के बाद वीरोचित रूप से उन के दाह कर्म का प्रबंध किया। तानाजी की चिता को स्वयं शिवाजी ने ही आग लगादी। उदयभानु के भी दाह कर्म का उन्हों ने इन्तज़ाम किया। दो दिन शिवाजी किले में रहे। मुगलों का जो झंडा वहाँ फहरा रहा था उसे हटा कर उस की जगह पर मराठों का भगव झंडा फहरा दिया। इस के बीच में किसी ने शिवाजी से कमलकुमारी की बात कही। उन्हों ने कमलकुमारी को बुलावा कर पूछा कि तुम सती होना चाहती हो? उस ने जवाब दिया कि मेरी वही एक इच्छा है। कृपा करके आप उस का इन्तज़ाम करा दें तो ईश्वर आप का भला करेंगे। शिवाजी ने फौरन उसे सतीधर्म को निभाने का सब प्रबंध करा दिया। कमलकुमारी सती हो गयी। महाराजा ने तानाजी के भाई सूर्याजी को सेनापति बना कर वहाँ रहने की आज्ञा दी। उन्हों ने यह घोषणा कर दी कि आज से इस किले का नाम "सिंह गढ" होगा। किले कि रखवाली का सब प्रबंध करने के बाद महाराज शिवाजी शिवनेर

वापस गये। वहाँ पहुँचने के बाद उन्होंने तुरंत ही तानाजी के पुत्र रायबा को बुलावा भेजा। रायबा महाराजा के पास आकर खडा हो गया। उन्होंने रायबा को गले से लगाया और फूट फूट कर रोया। एक महीना तक शिवाजी ने रायबा को अपने ही साथ रखा। उस के बाद उस को एक सूबे का सूबेदार बनाकर भेजा। तानाजी के मारे जाने से शिवाजी के दिल में जो चोट लगी थी वह कभी नहीं भरी थी। तानाजी का नाम इतिहास में अमर हो गया।

वीर रघुनाथ

बीजपुर में एक छोटा जमीन्दार था। वह बूढा हो गया। बुढापे कारण वह चल फिर नहीं सकता था। अंत में एक दिन उस ने इस दुनिया से विदा ली। उस की एक बेटी और एक बेटा था। बेटी अत्यंत सुन्दरी और गुणवति थी। वह लडकी चौदह पन्द्रह साल की हो गयी थी। जमीन्दार का एक नौकर था। उस को उस लडकी के साथ शादी करने की बडी इछा थी। उस को मालूम था कि वह उस के लायक पति नहीं है। लडकी का नाम लक्ष्मी था। लक्ष्मी के बिना जीना उस केलिये कठिन होगया। इसलिये उस ने धोखा देकर लक्ष्मी के साथ विवाह करने का निश्चय किया। वह जमीन्दार की नौकरी छोड कर चला गया। वहाँ से कुछ दूर पर डाकुओं का एक दल रहता था। उस ने

डाकुओं के सरदार के साथ मित्रता की। एक दिन रात में वह नीच डाकुओं को साथ लेकर जमीन्दार के घर आया। जमीन्दार की पत्नी का भी देहांत हो चुका था। लक्ष्मी, उस के भाई और दो तीन नौकर ही घर में थे। वे सब नींद में लीन हुए थे। डाकुओं ने घर लूट लिया और सारी संपत्ति ले कर भाग गया। लक्ष्मी और उस के छोटे भाई को भी डाकू पकड कर ले गया था। जमीन्दार के उस नमक हराम नौकर का नाम चंद था। वह लक्ष्मी को लेकर गायब हो गया।

लक्ष्मी के छोटे भाई का नाम रघुनाथ था। वह एक होनहार लडका था। कुछ दिनों के बाद रघुनाथ डाकुओं की आँखों में धूल झोंक कर उन के कैद से बच निकला। वह धीरे शिवाजी महाराजा के पास गया। उस ने शिवाजी की बहुत सी वीर कथायें सुन रखी थी। उस के मन में यह आशा हुई थी कि महाराजा की सेना में भर्ती होकर उन के समान वीर बनूँ। शिवाजी ने रघुनाथ को देखते ही पहचान लिया कि लडका होनहार है। उन्हों ने उस को तीरचलाना, तलवार चलाना और घोडे पर सवारी करने की विद्यायें सिखाने का प्रबंध किया। चार पाँच साल के भीतर रघुनाथ एक अच्छा योद्धा निकला। महाराजा ने उस को सेना में भर्ती किया। वह महाराजा के साथ कहीं कहीं लडाई के लिये गया था। उस ने अपनी होशियारी और वीरता को हर एक लडाई में प्रकट किया था। इस के कारण महाराजा को उस पर दिनों दिन प्यार बढ आता था। धीरे धीरे रघुनाथ हवलदार बनगया।

रघुनाथ हर एक काम बडी ईमानदारि के साथ करता था। इसलिये महाराजा को उस पर बडा विश्वास हो गया।

जब कभी कोई खास काम होता था तब महाराजा उस को ही उसी केलिये नियुक्त करते थे। जो काम महाराजा शिवाजी रघुनाथ को सौपता था उसे रघुनाथ बडी सावधानी और ईमानदारी से करता था। एक बार महाराज एक किले पर आक्रमण करने गये। रघुनाथ भी साथ था। शत्रुओं की संख्या हज़ार से अधिक थी और महाराजा के पास प्राण छोडनेवाला केवल पचासवीर। तमाम शत्रु मारे गये और महाराजा के बीस ही वीर मारे गये। उस दिन की लडाई में रघुनाथ ने शत्रुओं का जो संहार किया था उसे देखकर शिवाजी तक आश्चर्य चकित हो गये। जहाँ तहाँ महाराजा जाते थे रघुनाथ को भी साथ ले जाते थे।

एक बार महाराजा ने एक किले पर हमला करने का निश्चय किया था। एक सौ पचास वीरों की सेना लेकर महाराजा निकले। जब वे किले के नीचे पहुँच गये तब किले में दिया जलते उनहों ने देखा। तब उन को मालूम हुआ कि किसी ने दुश्मन को आक्रमण करने की सूचना दी है। किले के अंदर वाले लोग शत्रु के आने की प्रतीक्षा कर रहे थे। पीछे हटना शिवाजि ने सीखा नहीं था?। इसलिये उनहों ने भवानी का ध्यान कर के किले में आक्रमण करना शुरू किया। लडाई में शिवाजी की जीत हुई। लेकिन उस लडाई में शिवाजी के एक सौ सैनिक मारे गये और आक्रमण भी बहुत कठिन था। दुश्मनों को पहले ही खबर मिलने से वे भी तैयार रहते थे। शिवाजी अपने महल में लौट आये। उस लडाई में रघुनाथ ने जो वीरता दिखायी भी वह तारीफ के लायक थी। शिवाजी ने इस के पहले कई बार रघुनाथ के युद्ध निपुणता देख कर उस की प्रशंसा की है। लेकिन इस लडाई में शिवाजी के पास ही खडे होकर

उस जवान ने जो वीरता या पराक्रम दिखाया था वह अजब का था। शिवाजी जैसे वीर हैं वैसे ही वीरों का आदर करना भी वे जानते थे। शिवाजी के पचास वीर ज़िन्दा लौट आये। उन को उन्हों ने यथोचित पुरस्कार दिया। रघुनाथ के कमर में उन्हों ने अपने हाथों से एक सोने की मुट्ठीवाली तलवार बाँध दी।

उस के बाद शिवाजी ने सब को संबोधन कर के कहा- "पिछली लडाई में हमारी जीत अवश्य हुई। लेकिन हमारे हमले की खबर दुश्मनों को पहले ही मिली थी। इस के कारण हमारे कई वीर योद्धा मारे गये। मैं उस द्रोही का नाम जानना चाहता हूँ जिस ने दुश्मनों को खबर दी थी"। सब वीर एक दूसरे का मुंह ताकने लगा। थोडी देर तक सन्नाटा छाया हुआ था। थोडी देर पीछे एक जुमेदार ने कहा कि मेरे मातहत का एक जवान कुछ देर तक गैर हाजिर हुआ था। वह भवानी के मंदिर के पास पडाव डाल तेही गायब हो गया। फिरकूब के समय पर वापस आया।

शिवा :- कौन था वह? उसका नाम क्या है?

जुमे :- उस का नाम रघुनाथ है।

शिवाजी ने रघुनाथ को बुलाया और पूछा कि तुम कहाँ गये थे।

रघु :- महाराज, एक घंटे केलिये मैं एक आदमी से मिलने गया था। यह बात ठीक है। लेकिन मैं ने दुश्मनों को खबर नहीं दी है।

शिवा :- फिर तुम कहाँ गये थे? ठीक ठीक बताओ।

रघु :- यह मैं अब बता नहीं सकता। अवसर आने पर मैं बताऊँगा। आप मुझ पर भरोसा रखिये, मैं ने

दुश्मनों को खबर नहीं दी थी। रघुनाथ ने विश्वासघात कभी नहीं किया है और कभी नहीं करेगा।

शिवाजी को गुस्सा आ गया। उन्होंने झट रघुनाथ के कमर से तलवार खोल दी और देश निकाले की सज़ा भी दी गयी। रघुनाथ कुछ कहे बिना महाराजा की वन्दना कर के चलागया। लेकिन जितने लोग वहाँ मौजूद थे उन सब का दिल यही कह रहा था कि रघुनाथ कभी विश्वास-घात नहीं करेगा।

रघुनाथ ने अपने मन में सोचा कि मेरेलिये इस संसार में कोई नहीं है, मैं अकेला हूँ। क्यों न आत्म-हत्या कर डालूँ ? इस अपमान भार को ढोकर जीने की अपेक्षा मृत्यू ही अच्छी है। उत्तर क्षण में उसने सोचा, यह ठीक नहीं। मैं ऐसे करूँगा तो लोग समझेंगे कि रघुनाथ विश्वासघात है। इसलिये कितनी भी कठिनाइयों हो, उन को सह कर अपनी निर्दोषता को सापित करना ही चाहिये। रघुनाथ को फिर किसी ने कहीं नहीं देखा था।

जब भवानी के मंदिर के पास डेरा डाला था तब रघुनाथ उस मंदिर के पूजारी के घर गया था। इस के पहले एक बार रघुनाथ शिवाजी महाराजा का एक संदेश लेकर पुजारी से मिलने गया था और एक दिन पुजारी का मेहमान बन कर उस के घर में ठहरा था। वहाँ पुजारी की एक पोष्य पुत्री थी, जो एक राजपुत बालिक थी। रघुनाथ के दिल में उस के प्रति प्रेम होगया था। इसलिये उस से मिल कर बातें करने केलिये रघुनाथ वहाँ गया था। वहाँ से प्रेम प्रतिज्ञा कर के रघुनाथ लौट कर पडाव में आया। उस समय उस जवान ने इस आपत्ति के बारे में सोचा

तक नहीं था। प्रेम की बात बहुत विचित्र होती है। रुकावटों के बिना वह पूर्ण नहीं होता है।

रघुनाथ इधर उधर घूम रहा था। उस के मन में यही विचार था किस उपाय से अपमान से मुक्त होजाऊँगा। रघुनाथ चलते चलते यमुना नदी के किनारे पहुँचा। वहाँ उस ने एक साधु को बैठा देखा। रघुनाथ उस साधु के पास जाकर बातें करने लगा।

साधु :- तुम को देख कर मालूम होता है कि कोई दुख तुम को सता रहा है।

रघु :- ठीक है, मेरा मन एक बात के कारण बेचैन है।

साधु :- एक झूठा अपराध तुम्हारा एक बडे दुश्मन ने तुम पर लगाया है। उस से तुम अपमानित होगया है और तुम उसी से बेचैन हो न?

रघु :- आप का कहना बिलकुल ठीक है।

साधु :- वह तुम्हारा जानी दुश्मन है, मगर तुम उसे पहचानते नहीं।

रघु:- मैं ने किसी के साथ कोई द्रोह नहीं किया है। इसलिये मेरा विश्वास था, कि कोई मुझ से कोई द्रोह नहीं करेगा।

साधु :- यह दुनिया वैसी नहीं है जैसे तुम समझते हो।

रघु :- आप ने मुझ पर बडी कृपा है। मेहरबानी कर के मुझे कलंक से मुक्त होने का उपाय भी बता दीजिये।

साधु थोडी देर तक ध्यान लगा कर बैठा। उस के बाद कहने लगा। जिस आदमी ने तुम पर यह झूठा इलजाम

लगाया था वही सचमुच द्रोही है। उस ने किले पर आक्रमण करने की खबर दुश्मन को दी थी। उस ने अपना वह दोष चालाकी से तुम पर लगा दिया।

रघु :- इस की सचाई प्रकट करने केलिये मुझे क्या करना होगा।

साधु :- जिस को यह खबर दी थी वह एक मुसलमान है। वह अभी बीमार होकर पडा है। तुम एक मुसलमान का वेष धारण कर के उस के पास जाओ और उस से वह सच्ची बात प्रकट करने की प्रार्थना करो। उस का अंतिम समय निकट है, इसलिये तुम्हारी प्रार्थना करने पर वह सत्य प्रकट करेगा।

साधु का उपदेश सुन कर रघुनाथ खुश हुआ और साधु के पैरों पर नमस्कार कर के वहाँ से चला गया। रघुनाथ अपना वेष बदल कर एक मुसलमान फकीर बन गया। उस की लंबी दाढी थी। उस के एक हाथ में एक कुरान था। दूसरे हाथ में एक भिक्षा पात्र भी था। उस को देखने से यही मालूम होता था कि वह एक सच्चा मुसलमान है। रघुनाथ पूछते ताछते उस मुसलमान सरदार के घर पहुँचा। वह बीमार था। एक फकीर को देख कर उस की खुशी का ठिकाना न रहा। सरदार ने फकीर को सलाम दिया। फकीर ने कहा, तुम्हारा अंतिम समय निकट है। साफ दिल से खुदा के पास जाना चाहिये। खुदा पाक दिल में ही वास करता है। जो सच्चे दिलसे अपने मन की मलिनता को दूर के खुदा की याद करता है वह ज़रूर बहिश्त में पहुँचेगा। सरदार ने कहा मेरा दिल पाक है और मैं पाँच दफे नमाज़ पढता हूँ।

फकी :- ठीक है, तुम पाँच दफे नमाज़ करते हो। लेकिन तुम ने अपने मन में एक रहस्य को छिपा रखा है। उस रहस्य को प्रकट किये बिना तुम्हारा मन कैसे साफ होगा ?

सरदा :- मैं ने कोई रहस्य छिपा नहीं रखा है।

फकी :- नहीं, ज़रूर एक रहस्य को छिपादिया है। तुम बीमार होने के पहले शिवाजी के साथ एक लडाई हुई थी न ?

सरदा :- हाँ एक लडाई हुई थी। उस के पीछे मैं बीमार हो गया।

फकी :- उस दिन किले पर आक्रमण होने की सूचना तुम्हें मिली थी न ?

सरदा :- हाँ मिली थी।

फकी :- कैसे मिली थी ?

सरदा :- एक जुमेदार ने मुझे खबर दी थी,

मैं ने कुछ रुपये देकर एक आदमी को भेजा था। उस ने रुपये लेने के बाद मेरे नाम एक पत्र लिख कर भेज दिया था।

फकी :- ठीक वही है। तुम जानते हो, उस जुमेदार ने रुपये लेकर तुम्हें खबर दी थी। लेकिन उस का अपराध दूसरे एक जवान पर उस जुमेदार ने लगाया। वह बेचारा अब उस की सज़ा भोग रहा है। लडाई के कायदे के अनुसार तुम ने जो कुछ किया वह ठीक है। लेकिन खुदा के कायदे के मुताबिक वह धोखा है। जब तक तुम यह सच्ची बात शिवाजी को नही समझाओगे तब तक तुम्हारा मन साफ न होगा। तुम फौरन शिवाजी को यह खबर करो और सच्चे दिलसे खुदा के पास जाओ।

सरदार:- मैं यह बात बिलकुल भूल गया था। मैं अभी उस जुमेदार का भेजा हुआ पत्र शिवाजी के पास पहुँचा दूँगा।

सरदार ने अपनी संदूक से वह पत्र ढूँढ निकाला और उस के सरदार ने भी एक पत्र लिख कर दोनों पत्र शिवाजी के पास एक ईमानदार नौकर के जरिये भेज दिया। उस नौकर के लौट आने समय तक फकीर सरदार के पास बैठ कर कुरान के कई आयतें पढ रहे थे। नौकर शिवाजी का जवाब लाया। उस में यह लिखा था कि सरदार आप मेरे सच्चे मित्र हैं। मैं ने इस अपराध केलिये एक-स्वामिभक्त और ईमानदार हवलदार को देश निकाले की सज़ा दी थी। एक बेगुनाह पर अपराध लगाने से मुझे बडा खेद है। ईश्वर चाहे तो मैं उस से माफी माँगूंगा। खुदा आप का भला करें। यह जवाब पढ कर फकीर बहुत खुश हुआ और सरदार को सलाम देकर वहाँ से विदा होगया।

रघुनाथ खुशी खुशी चल रहा था। यमुना के किनारे जाकर साधु को धन्यवाद देने का उस का विचार था। लेकिन रघुनाथ वहाँ घूम फिर कर तलाश करने पर भी साधु का कोई पता न लगा। पर वहाँ रघुनाथ ने सुना कि शिवाजी महाराज राजा जयसिंह के कहे अनुसार औरंग-ज़ेब से मिलने दिल्ली गये और वहाँ वे कैद किये गये। यह खबर सुन कर रघुनाथ को बडा दुख हुआ। उस ने फिर कुछ सोचा नहीं, वह सीधे दिल्ली चला गया।

जब शिवाजी को मुगल सरदार से जुमेदार का पत्र मिला तब उन्हों ने उस को मारना चाहा। तब किसी ने उन से कहा कि यह जुमेदार रघुनाथ का बहनोई है। पर

रघुनाथ यह रहस्य नहीं जानता। इसी से इस को रघुनाथ से दुश्मनी होगयी थी। रघुनाथ एक अच्छा खानदान का है। इस जुमेदार ने रघुनाथ के घर को लूट लिया और उस की बहन को चुरा ले गया। उस के बाद जबरदस्ती से उस लडकी के साथ विवाह किया है। इतनी बातें सुनते ही शिवाजी महाराजा की आँखें लाल लाल होगयी। उन्हों ने गरज कर कहा, इस पाजी ने हम को भी धोखा दिया। विश्वासघात करना ही इस का काम है। अंत में शिवाजी ने उस को देश निकाले की सज़ा दी।

औरंगज़ेब ने शिवाजी को बहुत डरता था। इसलिये वहाँ सख्त पहरा लगा हुआ था। शिवाजी बीमार हो गया। उन की चिकित्सा के लिये मुसलमान हकीम बुलाया गया। हकीम आया और दवा देकर चला गया। एक हफ़्ता बीतने पर भी शिवाजी की बीमारी कम नहीं हुआ। एक दिन एक लंबी दाढीवाला हकीम शिवाजी के पास पहुँचा। हकीम ने रोगी की नाडियों की परीक्षा की। उस के बाद पीने के लिये एक दवा तैयार कर के दी। लेकिन रोगी ने उसे नहीं पिया। वह दवा मुंह में डालते ही हकीम के मुंह पर थूक दिया। रोगी ने हँसते हुए कहा "यह बीमारी नहीं, केवल बहाना है"। यह सुनते ही शिवाजी को गुस्सा आया और उन्होंने उस हकीम की दाढी पकड कर खींच ली। दाढी नकली होने के कारण वह शिवाजी के हाथ में आयी। तब शिवाजी बडे आश्चर्य में पड गये। वह हकीम रघुनाथ के सिवा और कोई नहीं था। शिवाजी ने रघुनाथ को गले लगाया। रघुनाथ ने फौरन दाढी उठा कर पहले की तरह बाँध दी। उस के बाद दोनों ने बातें की।

नये हकीम की चिकित्सा से शिवाजी की बीमारी कम होने लगी। हकीम रोगी के पास रोज़ आया करता था

और दोनों बातें भी किया करते थे। फिर एक सप्ताह बीतने पर शिवाजी चंगे हो गये। उस की खुशी में मिठाइयाँ बंटने लगे। तीन दिन तक यह जारी रहा। तीसरे दिन एक मिठाई के झाबे में बैठ कर शिवाजी कैद से बच निकले। जब वे निकले के बाहर आये तब उन का घोडा वहाँ तैयार था। जब कोई आपत्ति नहीं देखी तब वे घोडे पर सवार होकर भाग गये। जब से शिवाजी दिल्ली में कैद हो गये तब से उन के सिपाहियों में से बहुत लोग दिल्ली में आ कर वेष बदल कर रहते थे। जब शिवाजी दिल्ली के लिये रवाना हुए तब सिपाही भी उन के पीछे आये थे। क्योंकि उन को मालूम था कि औरंगज़ेब बडा ढोंगी है और उस की बात पर विश्वास नहीं कर सकते। इसलिये सिपाही दिल्ली में आ कर छिप कर रहते थे। शिवाजी बाल बाल बच कर महाष्ट्र में पहुँच गये।

रघुनाथ दिल्ली से निकल कर भवानी के मंदिर की ओर निकला। सरयूबाला से मिलने और उस की हालत समझने की उस की बडी आशा थी। वह बडी तकलीफें उठा कर वहाँ पहुँचा। वहाँ पहुँचने पर वह अत्यन्त निराश हो गया। क्योंकि उस ने सुना की पुजारी ने उस का ब्याह किसी के साथ निश्चय किया था। यह बात जान कर सरयू वहाँ से गायब हो गयी। बहुत खोजने पर भी यह नहीं समझ सका कि वह किस ओर गयी है। रघुनाथ बडा दुःखी हो गया। उस पर आपत्तियों का पहाड ही गिर रहा है। लेकिन जल्दी साहस को छोटनेवाला नहीं था रघुनाथ। उस ने अपने मत में यह तय किया कि सरयू कहीं भी हो, उसे ढूँढ निकालूँगा। लेकिन उस का डर यह था कि उस ने कहीं आत्महत्या कर डाली हो।

रघुनाथ एक साधु बन गया और अपना नाम गोस्वामी सीतापति रखा गया। साधु होकर घूमने में कई आपत्ति नहीं थी। लोगों से मिलने और बातें समझ लेने के लिये साधु का वेष बड़ा सहायक है। साधु कई गाँवों में घूमते हुए एक गाँव में पहुँचा। उस गाँव में एक मन्दिर था। मन्दिर के पास ही एक छोटी नदी बह रही थी। नदी में स्नान और मन्दिर में दर्शन करने के लिये लोग आते जाते थे। रघुनाथ मंदिर के पास ही एक पेड़ के नीचे बैठे कर आने जानेवालों की ओर देख रहा था। कोई कोई देहाती साधु से मिल कर बातें कर रहे थे और अपने भविष्य के बारे में पूछते थे। साधु उन के सवालों का ठीक ठीक जवाब भी देता था। उस गाँव में यह खबर फैल गयी कि एक साधु मंदिर के पास आया है और वह भूत-भविष्य के बारे में ठीक ठीक बताता है। पुरुषों की अपेक्षा ऐसी बातों स्त्रियाँ अधिक श्रद्धा रखती हैं। एक दिन एक प्रौढ स्त्री के साथ करीब अठारह साल की एक लडकी साधु के पास आयी।

प्रौढ :— इस लडकी के बारे में कुछ बातें जानना चाहती हैं।

साधु:—सची बातें कहने में कोई हानी है ?

प्रौढ:—कोई हानी नहीं, हम सच्ची बातें ही जानना चाहती हैं।

साधु:—यह लडकी एक युवक के प्रेम में फंस गयी है। यह अपना घर छोड कर यहाँ आकर छिप रहती है। उस जवान पर एक बडा अपराध लगा कर उस को देश निकाले की सज़ा दी गयी थी। मगर वह एक राज-

पुत और बडा ईमानदार है। उस का अपराध दूर हो गया और वह अब खरा निकला है। वह भी तुम्हारे प्रेम में पागल होकर तुम्हारी खोज में इधर उधर घूम रहा है।

प्रौढः—उस जवान के साथ उस की शादी हो सकती है?

साधुः—ज़रूर, एक महीने के अंद ब्याह होगा। उस के पहले ही दोनों की मुलाकात होने की संभावना है।

लडकी ने साधु को दक्षिणा दी और खुशी खुशी घर चली गयी। रघुनाथ भी बहुत खुश हुआ। वह शिवाजी महाराज से मिलने के लिये तेज़ी से चला गया। दो दिन के बाद रघुनाथ महाराज के पास पहुँचा। महाराज ने खुशी और आदर के साथ रघुनाथ का स्वीकार किया। दूसरे दिन ही महाराज ने अपने सारे सरदारों को दरबार में बुलवाया। पहले महाराज ने उस दिन की लडाई, जिस लडाई के कारण रघुनाथ को देश निकाले की सज़ा दी गयी थी उस के बारे में एक बयान दिया। इस के बाद औरंगज़ेब के जेल से महाराजा को मुक्त करने के लिये रघुनाथ ने जो साहस का काम किया था उस का भी वर्णन महाराजा ने दिया। इस के बिना महाराज ने जो अपराध किया था उस के लिये उन्होंने रघुनाथ से माफी भी माँगी। रघुनाथ के साहसिक कामों के बारे में सुन कर सभी सरदार दंग रह गये। महाराज ने यह घोषणा की कि आज से रघुनाथ को पाँच हजारी की पदवी दी गयी है। इस के बाद महाराज ने एक कीमती तलवार रघुनाथ के कमर में बाँध दी। सब लोग बहुत खुश हुए और "महाराजा की जय" एक ही स्वर में बोल उठे।

एक सरदार ने उठ कर कहा, रघुनाथ ने महाराजा की रक्षा के लिये और देश के लिये जो त्याग और साहस किया है वह हम से किसी से नही हो सकता। महाराज के ही मुँह से इन बातों को सुनने से हम लोग उस पर विश्वास करते हैं। नहीं तो विश्वास तक नहीं कर सकते। ऐसी अजब की बातें हैं ये सब। इसलिये रघुनाथ को पाँच हजारी का पद देकर सम्मान करने से हम सब बहुत खुश हैं। लेकिन इस समय हम लोग वह रहस्य भी जानना चाहते हैं जिस के लिए उस लडाई के दिन एक घंटे के लिये गैर हाज़िर हुए थे।

रघु:—वह रहस्य कुछ दिनों के बाद मैं प्रकट करना चाहता था। पर आप के पूछने से बताता हूँ। महाराजा का एक संदेशा लेकर उस लडाई के एक महीने के पहले मैं भवानी के मंदिर के पुजारी के पास गया था। एक रात को मैं पुजारी के घर में ठहर गया। उन की एक पोष्य पुत्री है जो अनाथ है। उस की कहानियाँ सुन कर मुझे उस पर दया आ गयी। पीछे एक दिन उस से मिलने का वादा देकर मैं लौटा था। जब भवानी के मंदिर के पास डेरा डाला था तब आराम करने का समय था। तब मैं उस बालिका से मिलने गया था। उस दिन मैं ने उस से यह प्रतिज्ञा भी की थी कि मैं उस के साथ ब्याह करूँगा। यह एक प्रेम की बात होने से मैं ने उस दिन प्रकट नहीं की। अब मैं आप लोगों के आशीर्वाद से उस कन्या के साथ ब्याह करना चाहता हूँ।

सब लोगों ने रघुनाथ की तारीफ की। सभाविसर्जन हुई। सरयू बाला जिस किसान के घर में रहती थी उस

किसान का एक बेटा शिवाजी की सेना में एक सिपाही था। वह कुछ दिन की छुट्टी में अपने गाँव गया था। उसने रघुनाथ की बात अपने माता-पिता से कहीं। यह सब सरयू ने भी सुना था। वह बहुत खुश हुई।

रघुनाथ महाराजा की आज्ञा से एक महीने की छुट्टी लेकर सरयू से मिलने गया। जाते समय रास्ते में उस जुमेदार से उस की मुलाकात हुई जिस ने उस को धोखा दिया था। रघुनाथ की बढती उस से सही नहीं जाती थी। वह उस से जलता ही रहता था। दोनों में लडाई शुरू हुई। दोनों तलवार चलाने में बडे निपुण थे। इसलिये तीन घंटे तक दोनों ने बडी वीरता से लडी। अंत में रघुनाथ ने उस के शरीर के दो टुकडे कर दिये।

रघुनाथ उस किसान के घर जाकर सरयू से मिला। गरमी के ताप से मुरझाई हुई जिस प्रकार वर्षाऋतु के पानी मिलने पर पनपने लगती है उसी प्रकार रघुनाथ के मिलन से सरयू का चेहरा खिल उठा। रघुनाथ और सरयू ने बहुत देर तक बातें कीं। सरयू अपने सारे दुख को एक दम भूल गयी। एक दिन वहाँ रहने के बाद रघुनाथ सरयू से विदा लेकर चला गया।

पन्द्रह दिन के बाद सरयू का विवाह रघुनाथ के साथ हुआ। इस ब्याह से सरयू से भी अधिक पुजारी प्रसन्न हुआ। महाराज शिवाजी वधु और वर को एक एक रत्न का हार इनाम में दिया। चार दिन तक विवाहोत्सव मनाया गया। रघुनाथ ने उस किसान और उस की पत्नी को भी न्योता दिया था। उन के जाते समय उन दोनों को कई पुरस्कार दिये। वे दोनों दम्पतियों को आशीर्वाद देकर वापस गये। दोनों दाम्पत्य जीवन का आनन्द लेने लगे।

रघुनाथ ने अपनी वीरता और साहस से पाँच हज़ारी का पद प्राप्त किया। महाराज शिवाजी को कई आपत्तियों से उस ने बचाया। अपने ऊपर जो झूठा इलजाम लगाया था बड़ी वीरता से उस का सामना कर के अपनी निर्दोषता को साबित किया। रघुनाथ शिवाजी महाराज और सारे सैनिकों की तारीफ का पात्र बन गया।

सच है, वीर पुरुष किसी भी हालत में अपनी वीरता और साहस का खो नहीं देते।

'तिलक'

बचपन

सन् १८५६ जुलाई २३ तारीख को तिलक जी का जन्म रत्नगिरिजिल्ला में हुआ। इन के पिता का नाम गंगाधरपंत और माता का नाम पार्वती बाई था। पार्वती बाई की पाँच लडकियाँ हुई। एक पुत्र का मुँह देखने की उन की बड़ी इच्छा थी। उन की एक परिचित बहन ने उपदेश किया कि सूर्य का व्रत करो। तभी से पार्वती बाई सूर्य का व्रत करने लगी। एक साल के बाद उन्होंने एक पुत्र का जन्म दिया। बचपन में तिलक बिलकुल दुबला था। धीरे धीरे उन की तबियत अच्छी होने लगी और वे आरोग्यवान बन गये। बच्चे का खेल कूद देख कर माता-पिता बड़े सुख पाते थे। बाल के आठ वर्ष का होते होते उस के यज्ञोपवीत संस्कार का वक्त आ गया। बचपन में तिलक को बाल कहा करते थे। गंगाधर पंत उस समय पूना में तहसील का एक कर्मचारी था। वहाँ अंग्रेज़ी शिक्षा

का अच्छा प्रबन्ध था। लेकिन गंगाधर पंत ने अपने पुत्र को पहले मराठी स्कूल में ही भर्ती कराया। क्योंकि उन का विचार था कि मातृ-भाषा का पूरा ज्ञान होना चाहिये। इसी समय बाल की माता का देहांत हो गया था। बाल का स्वभाव हठीला था और उस में दूसरों से अलग होकर कुछ विशेष कर दिखाने की प्रवृत्ति थी। यह बात उन के स्कूल जीवन के कुछ प्रसंगों से और स्पष्ट होती है। सन् १८९९ की दीवाली के बाद बाल पूना हाईस्कूल के पांचवें दर्जे में भरती हुआ। अभी तक जो विषय उस ने पहले ही मराठी में कर लिये थे, अब ज्यादातर वही अंग्रेज़ी में करते थे। जब बाल मैट्रिक की परीक्षा के लिये पढ रहा था तब गंगाधर पंत स्वर्गवासी हुआ। सन् १८६१ में बाक का विवाह हो गया। पत्नी तापी बाई कोंकण के लाडघर गाँव के बाक नामक कुटुम्ब की कन्या थी। वह कुटुम्ब उदारता और कुलीनता के लिये मशहूर था। विवाह के समय कन्या और वर दोनों मातृविहीन थे। उस समय लडकी की उम्र केवल नौ वर्ष की थी। विवाह के बाद तापी बाई सत्यभामा नाम से तिलक परिवार की सदस्या बनी। बाक का नाम भी विवाह के बाद बकवतराव हो गया।

कालेज में

मैट्रिक पास होने के बाद आगे की पढाई के लिये दिलक ने डकन कालेज, पूना में प्रवेश किया। इस समय भारत में अंग्रेज़ी शिक्षा के पैर जम चुके थे। अंग्रेज़ी शिक्षा की पहली फसल के अनेक डिगरीधारी राजमान्यता के साथ साथ लोकमान्यता भी प्राप्त कर चुके थे। कई बडे बडे ऊँचे पदों पर और सुख जीवन बिताते थे। कालेज में दाखिल होते समय बाक कमजोर था। पिता की सहायता हट गयी थी। इस के बिना विवाह भी हो चुका था। जिम्मेदारी

की भावना पैदा होने से उस में अपने आप को बनाने की तीव्र इच्छा पैदा हुई। उस के लिये सब से पहले तो उस ने अपने शरीर को मज़बूत बनाने का निश्चय किया। एक वर्ष के बाद उस ने अपना स्वास्थ्य बडा अच्छा बना लिया। तैरने में भी वह बडा होशियार निकला। बाक में साहस और निर्भयता के गुण भी काफी मात्रा में थे।

प्रथम वर्ष की परीक्षा पास करने के बाद अंग्रेज़ी के विशेष अध्ययन के लिये तिलक बंबई के एलफिन्स्टन कालेज में एक सत्र के लिये भर्ती हो गये। वहाँ की पढ़ाई तिलक को अच्छी न लगी। इसलिये फिर डकन कालेज में वापस आये। वहाँ से गणित लेकर प्रथम श्रेणी में पास हुए। उस के बाद १८७९ के दिसंबर महीने में उन्होंने एल-एल बी० की० परीक्षा दी और उस में उत्तीर्ण हो गये।

न्यू इंग्लिश स्कूल

तिलक का एक बडा मित्र था आगरकर। दोनों एक ही विचार के थे। दोनों शिक्षा के महत्व को अच्छी तरह जानते थे। अपने देशभाइयों में शिक्षा का प्रचार करना था दोनों का ध्येय। लेकिन यह कार्य दूसरों की सहायता और सहयोग के बिना चल नहीं सकता था। इसलिये दोनों मित्र विष्णु शास्त्री से मिले। वे साप्ताहिक निबंध माला के कारण काफी मशहूर हो गये थे। उन से अच्छी तरह विचार विनिमय करने के बाद यह तय हुआ कि १ जनुवरि १८८० से एक स्वतंत्र स्कूल शुरू किया जाय।

पूर्व निश्चय के अनुसार स्कूल खोला गया। शिक्षा मातृ-भाषा में ही देने का निश्चय भी हो चुका था। स्कूल के उद्घाटन के अगले दिन स्कूल के कमरे लीपने पोतने आदि का काम तिलक और उन के एक मित्र ने रात को

जागकर पूरा किया। पहले दिन १६ विद्यार्थी उपस्थित थे और १५० नाम हाजरी पत्रक में दर्ज हो चुके थे। इस प्रकार स्कूल का काम शुरू हुआ। विद्यार्थियों की संख्या तेज़ी से बढती गयी। मई की छुट्टियाँ होने के पहले यह संख्या ३३६ तक पहुँच गयी। तिलक स्कूल में गणित और कभी कभी अंग्रेज़ी पढाते थे। विद्यार्थियों की ग्रहणशक्ति के अनुसार पढाना उन के लिये सहज नहीं था। बाद में कालेज खुल जाने पर वह वहाँ गणित और संस्कृत और कभी कभी विज्ञान भी पढाने लगा। स्कूल की अपेक्षा वहाँ वह अधिक सफल सिद्ध हुआ। स्कूल की छत्रों की संख्या लगातार बढती ही गयी और पाँचवें वर्ष तो यह संख्या लगभग एक हज़ार हो गयी।

भारत सरकार की ओर से १८८२ में नियुक्त शिक्षा आयोग के अध्यक्ष सर विलियम हंटर ने इस नयी शिक्षा संस्था के बारे में इस तरह कहा था। "इस स्कूल की प्रगति देखते हुए मैं यह कह सकता हू कि सारे हिन्दुस्तान में इस की बराबरी करनेवाला एक भी स्कूल मेरे देखने में नहीं आया।

न्यू इंग्लिश स्कूल की स्थापना के बाद एक वर्ष के भीतर ही इस युवक शिक्षक मण्डल ने लोक शिक्षण के अंग के रूप में एक मराठी और एक अंग्रेज़ी अखबार निकालने का निश्चय किया। विष्णुशास्त्री ने सात साल तक 'निबंधमाला' नामक मासिक पत्र चलाया था। एक दैनिक पत्र निकाल कर जनता के हित के लिये प्रयत्न करने की इच्छा उन में थी। अंग्रेज़ी पत्र मराठे के सम्पादन की जिम्मेदारी उन्हें और आगर कर के मराठी पत्र केसरी के सम्पादन की जिम्मेदारी दी गयी।

इन पत्रों का विज्ञापन बम्बई के 'नेटीव ओपीनियन' नामक पत्र में दिया गया। विज्ञापन में पत्र का उद्देश्य भी बताया

गया था। हमारा यह निश्चय है कि इस पत्र में किसी भी विषय का जो विवेचन किया जायगा वह निष्पक्ष पूर्ण होगा। केसरी में नवीनता के साथ विविधता भी काफी थी। उस के पहले ही अंक में यह स्पष्टथा कि संपादक मंडल के क्या विचार है। वर्तमान पत्र मुख्यतः दो प्रकार से उपयोगी हो सकते हैं। समाज सुधार के लिये और कोई साधन नहीं है। घोषणा के अनुसार 'केसरी' का पहला अंक १८८१ के पहले मंगलवार के दिन—४ जनुवरी को प्रकट हुआ। इस के लिये जो छापाखाना खरीदा था उस के सब सामान तिलक अपने सिर पर रख कर नये मकान में ले गया। केसरी का पहला अंक छप जाने पर स्वयं उसे बडे सवेरे ग्राहकों के घर पहुंचाने गये। ग्राहक संख्या तीन हज़ार होने तक कई काम तिलक स्वयं करते थे।

न्यूस्कूल के मंडल ने जब केसरी और मराठा पत्र शुरू किये तो लोगों को उन के बारे में यह धारणा होगयी। ये लोग शिक्षक ही नहीं, वरन देशाभीमानी भी हैं। मराठे में एक लेख प्रकाशित करने से तिलक को तीन बार जेल की यात्रा करनी पडी। सज़ा के बाद जब वे बाहर निकल आये तब लोगों की एक बडी भीड ने उन का स्वागत किया। जगह जगह उन्हें मान पत्र दिये गये और उन का गुण गान किया गया। ग्यारह साल के पीछे मंडल के दूसरे सदस्यों और तिलकजी में मत भेद हुआ। गोपालकृष्ण गोखले भी मंडल का एक सदस्य था। उन की लिखी एक गणित पुस्तक पर मत भेद शुरू हुआ। आखिर तिलक ने बडे दुख के साथ इस्तीफा दिया। उस के बाद वे वकालत करने लगे। आठ साल तक वे दूसरे वकीलों के साथ वकालत करते थे। इसलिये उन को महीने में डेढ सौ रुपये से अधिक

आमदनी नहीं मिलती थी। फिर भी उस से वे संतुष्ट रह कर अपना दिन बिताते थे।

कांग्रेस में प्रवेश

राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना सन् १८८५ में हुई थी। इस के संस्थापकों में प्रथम व्यक्ति ह्यूम नामक एक अंग्रेज़ था। संस्था का पहला अधिवेशन बंबई में हुआ था। पूना उन दिनों न्यायमूर्ति रानडे का कार्यक्षेत्र होने के कारण इतना महत्व प्राप्त कर चुका था कि कई लोग उसे पश्चिम भारत की राजधानी कहते थे। इसलिये राष्ट्रीय कांग्रेस का उद्घाटन पूना में ही करने की योजना उस नगर के महत्व के अनुरूप ही थी। लेकिन पूना में उन दिनों प्लेग फैला हुआ था। इसलिये अधिवेशन पूना में न होकर बंबई में हुआ। आरंभ में सरकार का कांग्रेस के प्रति अच्छा दृष्टिकोण था। दूसरा अधिवेशन भी बंबई में हुआ। तीसरे अधिवेशन मद्रास में हुआ था। लेकिन इस के बाद सरकार का दृष्टिकोण बदल गया। यहाँ तक कि चौथे अधिवेशन के समय इलाहाबाद में कांग्रस के मंडप केलिये जगह मिलना भी मुश्किल होगया।

कांग्रस पाँचवाँ अधिवेशन फिर बंबई में हुआ। इस अधिवेशन में तिलक ने भाग लिया। कांग्रेस के कार्यक्रम में सक्रिय मात्र लेने का उन का यह पहला अवसर था। इस अधिवेशन में तिलकने विधान सभाओं के चुनावों के बारे में एक प्रस्ताव पेश किया। गोखले ने उस का अनुमोदन किया।

१८९५ कांग्रेस का अधिवेशन पूना में होना निश्चित हुआ। तिलक ने केसरी में कांग्रेस के संविधान के बारे में कुछ

सुझाव दिये थे। इस समय सनातनियों ने कांग्रेस को चन्दा देने से इनकार किया। सुधार वादी लोग चन्दा देने को तैयार थे। तिलक सिर पर इस वर्ष कई कामों की जिम्मेदारी आ पडी थी। शिवाजी की समाधि के जीर्णोद्धार का आन्दोलन भी इसी साल शुरू हुआ था। नगर पालिका और विधान परिषद के चुनाव भी इसी बीच में हुए थे। पूना की प्रसिद्ध संस्था 'सार्वजनिक सभा' का संगठन भी इसी समय उन के हाथ में आ गया था। इस समय तिलक के पुराने साथी आगरकर का देहान्त होगया। अपने एक घनिष्ट मित्र और देश भक्त के देहान्त से वे बडे दुखी हुए।

१८९६ में पूना में बडा अकाल पड गया। अकाल के समय और प्लेग के समय अपने देश भाइयों केलिये करुणा से पीडित होकर तिलक ने अथक परिश्रम कर के उन की थोडी बहुत सहायता करने का प्रयत्न किया। इस साल अतिवृष्टिसे पहली फसल बरबाद होगयी। बाद में वर्षा बिलकुल न होने से लोगों पर दूसरी मार पडी। अकाल से पीडित लोगों को सरकार की तरफ से कोई सहायता नहीं मिली। केसरी के जरिये कई सप्ताह तक वह लगातार लोगों को अकाल की वास्तविक परिस्थिति के बारे में बताते रहे।

जुलाई १८९७ के दिन बंबई के चीफ़ प्रेसिडेंसी मजिस्ट्रेट की अदालत में केसरी के १५ जून के लेख को राजद्रोही बताकर उस के लेखक तिलक, मुद्रक बाक और प्रेस के मालिक गोखले पर मुकदमा दायर किया गया। न्यायीशने तिलक को अठारह महीने की सख्त कैद की सजा सुनाई। मुद्रक छोड दिया गया। तिलक और उस की मित्र मंडली ने प्रिवी कौंसिल में अपील करने का निश्चय किया। लेकिन प्रिवी कौंसिल में अपील रद्द होगयी।

इसी वर्ष दिसम्बर के अंत में अमरावती में कांग्रेस का तेरहवाँ अधिवेशन हुआ। अध्यक्ष श्री. शंकरन नायर ने पूना की दमन नीति और तिलक को दी गयी सजा की ओर लोगों का ध्यान आकृष्ट किया। जेल में तिलक को काफी परेशान होना पडा। जेल में तिलक की तबियत दिनों दिन बिगडने लगी। इस से जनता में बडी चिन्ता फैल गयी। ६ सितंबर १८९७ को रात के दस बजे तिलक जेल से रिहा कर दिये गये। तिलक की रिहाई की खबर तुरन्त ही चारों ओर फैल गयी। कोई दस हजार लोग तिलक से मिलने आये होंगे। देश-विदेश से आये हुए अभिनंदन पत्र और तारों के ढेर लग गया।

स्वराज्य का संदेश

हम देख चुके हैं कि कांग्रेस के बनारस अधिवेशन में बंग-भंग की निन्दा की गयी थी। इस नीति को बदलने केलिये या कम से कम आगे बढने से रोकने केलिये नरम दल के नेताओं ने प्रयत्न शुरू किये। उसके बाद कलकत्ते में कांग्रेस का अधिवेशन दादा बाई नवरोजी की अध्यक्षता में हुआ। उस सम्मेलन में 'स्वदेशी' और बहिष्कार के विषय में जो प्रस्ताव पास हुए, उन के संबंध में आन्दोलन शुरू हो गया। महाराष्ट्र में भी सब तरफ स्वदेशी और बहिष्कार की हवा फैल गयी। महाराष्ट्र के स्वदेशी और बहिष्कार आन्दोलन का इतिहास बहुत पुराना है। किन्तु स्वदेशी के जरिये स्वावलंबन - वृत्ति और प्रतिकार शक्ति बनाने का श्रेय तिलक को ही देना पडेगा। लोकमान्य की पहली पुण्य - तिथि के समय लिखते हुए गाँधीजी ने ठीक ही कहा था "स्वराज्य मेरा जन्मसिद्ध अधिकार हैं"। यह तिलक गीता का पूर्वार्द्ध है। "स्वदेशी हमारा जन्म निर्मित कर्तव्य है" यह उस का उत्तरार्ध है।

बंग-भंग के बाद स्वदेशी और बहिष्कार का समर्थन करते हुए उन्हों ने इन दोनों की प्रतिकार शक्ति पर ही ज्यादा जोर दिया। इस के अनुसार एक एक पैसा लेकर निधि इकट्ठा करने की और उसकी सहायता से दियासलाई, पेंसिल, साबुन, काँच की चीज़े आदि बनाने केलिये छोटे-बडे कारखाने स्थापित करने की योजना बनाई गयी। तिलक ने इन कामों में काफी दिलचस्पी ली। इस के परिणाम स्वरूप वह बहुत कामयाब हुई। तिलक, आगर कर और विष्णु शास्त्री ने १८८० में जब 'न्यूइंग्लिश स्कूल' की स्थापना की थी, उस समय उन की दृष्टि भी राष्ट्रीय ही थी। वे अच्छी तरह जानते थे कि देश के बालकों का शिक्षा देश के लोगों के हाथ में हो तो उस में जान आ सकती है। ऐसी शिक्षा से लोगों में देश की संस्कृति, इतिहास, आदि के बारे में गौरव की भावना पैदा की जा सकती है। यह बात उन्होंने स्कूल की स्थापना के समय स्पष्ट कर दी थी।

तिलक का इस बारे में एक बडा आग्रह यह था कि राष्ट्रीय शिक्षा स्वभाषा के जरिये ही दी जानी चाहिये। इस विषय में वह कहते थे समाज के व्यवहार, उस के विचार, उस के कार्य तथा उस की भाषा, इन सब का संबंध इतना घनिष्ट है कि किसी एक का प्रतिबिंब दूसरे पर पडे बिना नहीं रह सकता। एक का विकास हुआ तो दूसरे का विकास भी होता है। अगर हम मराठी भाषा द्वारा शिक्षा पाते, तो बावन वर्ष की आयु में जो ज्ञान हम ने प्राप्त किया है, वह २७ या ३० वर्ष में ही प्राप्त कर लेते।

कलकत्ता अधिवेशन में अधिवेशन केलिये पंजाब और नागपुर की ओर से निमंत्रण दिये गये थे। नरमदल के

समर्थकों का खयाल था कि लाला लजपत राय के पंजाब में कांग्रेस का अधिवेशन करना खतरनाक है। इसलिये उन्होंने नागपुर का निमंत्रण स्वीकार किया। लेकिन गरम दलवालों ने इस पर असन्तोष प्रकट किया। इस पर फिरोजशाह मेहता ने दोनों पक्ष के लोगों को बंबई बुलाया और यह निश्चय किया गया कि अधिवेशन सूरत में हो। ठीक इसी समय लाला लाजपतराय मांडले जेल से रिहा होकर स्वदेश लौट आये। कई लोगों ने यह सुझाव दिया कि सरकार के प्रति असंतोष व्यक्त करने केलिये लालाजी को ही सूरत अधिवेशन का अध्यक्ष बनाया जाय। लेकिन नरम दल के लोगों को यह बिलकुल स्वीकार न था। आखिर गोखले स्वयं जाकर लालाजी से मिले और लालाजी ने अपनी स्वाभाविक नम्रता से कहा कि वह अध्यक्ष पद नहीं चाहते। इस प्रकार अध्यक्ष पद का विवाद खतम होगया।

सूरत से लोकमान्य तिलक के निमंत्रण पर अरविंद घोष बंबई और पूना गए। दोनों जगहों पर उन का बडी धूमधाम से स्वागत हुआ। पूना में स्वदेशी, बहिष्कार तथा राष्ट्रीय शिक्षा पर भाषण देते हुए अरविंद ने कहा कि स्वराज्य केलिये हमें लडना चाहिये।

इंग्लैंड का पत्र 'लंदन टाइम्स' के विदेशी विभाग के प्रतिनिधि शिरोल ने तिलक के संबंध में कई झूठी बातें लिखी थीं। इस समय तिलक जेल में थे। जेल से रिहाई पा कर तिलक बंबई आये। तब उन्हों ने यह लेख पढा तो उन को बडा गुस्सा आया। उन्होंने फौरन लंदन जा कर शिरोल पर मुकदमा चलाया। इस मुकदमे केलिये चार-पाँच लाख रुपये तक खर्च करना पडा। बंबई के लोगों ने इस केलिये एक निधि ही जमा किया। पर शिरोल एक अंग्रेज़

होने के कारण फैसला उस के अनुकूल था। मुकदमे का फैसला हो जाने के बाद शिरोल ने एक अखबार के प्रतिनिधि के मुलाकात देते हुए कहा था "मैं वर्षों से अखबार में लिखने का धंधा करता आया हूँ। इस बीच में मेरे देखने में केवल दो ही निडर पुरुष आये। उन्होंने मुझ से डटकर लडा है। वे एक तिलक और दूसरे जर्मनी के बादशाह कैसर हैं"।

३० मई १९१६ के दिन बंबई में गाँधी जी की अध्यक्षता में लोकमान्य के वास्ते चन्दा जमा करने के लिये एक सभा हुई। उस में तिलक की अब तक की सेवाओं के प्रति कृतज्ञता प्रकट की गई। गाँधीजी ने कहा, 'तिलक का और मेरा मार्ग भिन्न है, किन्तु स्वार्थ-त्याग और विद्वत्ता, ये उन के दो मुख्य गुण हैं। इसलिये मुझे हमेशा ऐसा लगता है कि तिलक सत्याग्रही होते तो कैसा सुन्दर होता।"

२७ नवम्बर को तिलक बंबई पहुँचे। वहाँ पहुँचने पर उन का भव्य स्वागत हुआ। सभायें हुई और मान पत्र दिये गये। उन का उन्होंने समुचित जवाब देकर कृतज्ञता प्रकट की।

लोकमान्य तिलक संस्कृत के बडे पंडित थे। केसरी के सम्पादक के नाते लोकमान्य ने अनेक विषयों पर बहुत से लेख लिखे। इन के अलावा इन्होंने तीन ग्रन्थ लिखे, एक मराठी में और दो अंग्रेज़ी में। १ ओरायन (मृगशीर्ष) २ आर्कटिक होम इन दी वेदाज़ (आर्यों का मूलनिवास स्थान) ३ भगवद गीता रहस्य। तिलक ने अपने बचपन से ही गीता का नियमित पाठ करते आये थे।

अंतिम-यात्रा

लोकमान्य का आरोग्य अब धीरे धीरे खराब होता जा रहा था। स्वराज्य संघ की आखिरी सभा में उन्होंने कहा था। "मेरी सब शक्तियाँ अब क्षीण होती जा रही है। किसी नये काम की जिम्मेदारी सिर पर लेना या नहीं,

इस का निर्णय मुझ पर ही छोड दीजिये। २३ तारीख को उन के ६४ वें जन्म दिवस पर सारे देश से आये हुए बधाई के पत्रों व तारों का ढेर लग गया। उन को बुखार चढ गया था। डाक्टरों ने जांच कर के बताया कि उन्हें निमोनिया हो गया है। २७ को उन की हालत चिन्ताजनक हो गयी। किन्तु मस्तिष्क पर कोई असर नहीं हुआ। दोपहर के बाद बुखार बढने लगा और हृदय की कमज़ोरी नज़र आने लगी। मृत्यु के पहले उन्होंने ये अंतिम शब्द कहा "स्वराज्य प्राप्त किये बिना भारत की कभी भी बरकत नहीं होगी। हमारे अस्तित्व को टिकाये रखने के लिये भी यह ज़रूरी है।"

लोकमान्य का जीवन जैसा संस्मरणीय था वैसा ही उन की अंत्येष्टिक के समय का दृश्य था। बंबई के सारे इतिहास में इस प्रकार के व्यापक शोक का कोई प्रसंग पहले उपस्थित नहीं हुआ था। सुबह चार बजे से नर-नारियों का प्रवाह उन के अंतिम दर्शन करने के लिये उन के निवास स्थान 'सरदार गृह' के निकट उमड पडा। अंतिम-यात्रा में सात-आठ लाख व्यक्ति शामिल हुए थे। सारी बंबई नगरी उमड पडी थी। चौपाटी के लंबा चौडा मैदान में उन का दाह संस्कार किया गया। गाँधीजी ने यह कहा "मेरा सब से बडा आधार चल गया"।

लोकमान्य तो एक ही थे। लोगों ने तिलक महाराज को जो पदवी, जो उच्च स्थान दिया था, वह राजाओं के दिये पदवियों से लाख गुना कीमती था। जिसे हम पूजनीय मानते हैं उस की सच्ची पूजा उन के सद्गुणों का अनुकरण करना ही है। लोकमान्य अत्यन्त सादगी के साथ रहते थे। उन के स्मरण के लिये हमें भी अपना जीवन सादा बनाना चाहिये। जो हमारेलिये जन्मा और हमारेलिये ही मरा।

4769.

Indic Digital Archive Foundation

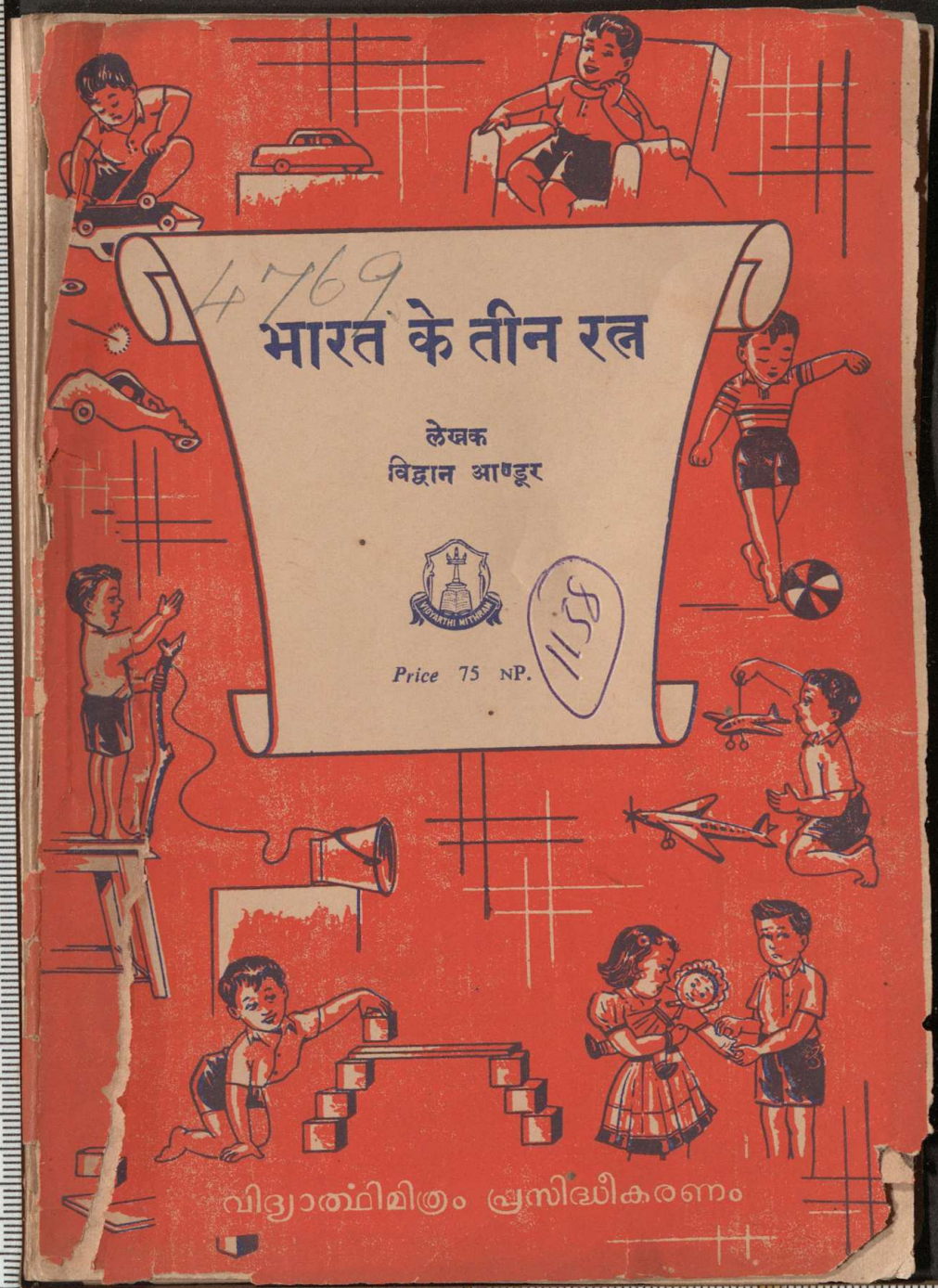

4769

भारत के तीन रत्न

लेखक
विद्वान आण्डूर

VIDYARTHI MITHRAM

1158

Price 75 NP.

വിദ്യാർത്ഥിമിത്രം പ്രസിദ്ധീകരണം

gpura.org